पाठ - 7

परिवर्तनकारी बाह्य शक्तियाँ

आइए जानें–

- अपक्षय किसे कहते हैं? उसके प्रकारों को उदाहरण सहित समझ सकेंगे।
- तल संतुलन की विभिन्न क्रियाओं की व्याख्या कर सकेंगे।
- निम्नीकरण और अधिवृद्धि में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगे।
- नदी, पवन, भूमिगत जल, हिमानी और समुद्री लहरों के कार्यों को समझ सकेंगे।
- अपरदन, परिवहन और निक्षेपण कार्यों द्वारा निर्मित स्थलाकृतियों को समझ सकेंगे।
- मृदा निर्माण, मृदा परिच्छेदिका, मृदा अपरदन तथा उसके संरक्षण के उपायों को समझ सकेंगे।

धरातल का स्वरूप सदैव एक जैसा स्थाई नहीं रहता। वह बदलता रहता है। इसके स्वरूप को बदलने में कुछ शक्तियाँ क्रियाशील रहती हैं। ये शक्तियाँ दो प्रकार की होती हैं– आंतरिक शक्तियाँ और बाह्य शक्तियाँ। आन्तरिक शक्तियाँ धरातल पर कोई न कोई नई स्थलाकृतियों का निर्माण करती हैं, जबकि बाह्य शक्तियां उन स्थलाकृतियों में परिवर्तन करने में जुट जाती हैं। आन्तरिक शक्तियों के बारे में पिछले पाठ में अध्ययन कर चुके हैं। इस पाठ में परिवर्तनकारी बाह्य शक्तियों का अध्ययन करेंगे। बाह्य शक्तियाँ दो प्रकार की होती हैं– प्रथम, वे जो चट्टानों को अपने ही स्थान पर कमजोर कर तोड़-फोड़ करती हैं तथा दूसरी वे जो उन टूटे-फूटे चट्टानी टुकड़ों व कणों को उनके मूल स्थान से हटाकर निचले भू-भागों में जमा करती हैं। नदियाँ, पवनें, भूमिगत जल, हिमानी और समुद्री लहरें दूसरे प्रकार की शक्तियाँ हैं जो स्थलाकृतियों के स्वरूप में परिवर्तन करने में मुख्य भूमिका निभाती हैं। इनमें प्रथम प्रक्रिया को 'अपक्षय' तथा द्वितीय को 'अपरदन चक्र' कहते हैं।

अपक्षय

अपक्षय एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें खुली चट्टानों का 'विघटन' और 'अपघटन' अपने मूल स्थान पर ही होता है। चट्टानों के विघटन में मुख्य रूप से मौसम या ऋतु के तत्वों का प्रभाव पड़ता है। तापमान, वर्षा, पाला (तुषार), कोहरा और हिम मौसम के मुख्य तत्व हैं। इसलिए इन्हें ऋतु अपक्षयकारी शक्तियाँ भी कहते हैं। धरातल पर पड़ी हुई चट्टानें जैसे ही मौसम के तत्वों के सम्पर्क में आती हैं, वैसे ही उनका अपक्षय होने लगता है। प्रत्येक चट्टान में किसी न किसी खनिज का अंश अवश्य रहता है जो रासायनिक परिवर्तन में सहायक होता है।

चट्टानों का विघटन (टूट-फूट) तापमान में परिवर्तन और पाले (तुषार) के प्रभाव से होता है। चित्र में देखिए किस प्रकार चट्टानों का विघटन होने से उनके टुकड़े एवं मलवा उसी स्थान पर गुरूत्वाकर्षण के कारण इकट्ठा होता रहता है। दिन की गर्मी में चट्टानें फैलती हैं और रात्रि की ठंड में एकाएक सिकुड़ने से उनमें तड़कन या दरारें पड़ जाती हैं, जो धीरे-धीरे चट्टानों को चूर-चूर करती जाती हैं। चट्टानों का विघटन एक यांत्रिक प्रक्रिया है, जबकि अपघटन की प्रक्रिया में चट्टानों में रासायनिक परिवर्तन होते हैं। चट्टानों में खनिजों के कण इस प्रकार आपस में गुंथे होते हैं कि पहले तो उनका अस्तित्व दिखाई नहीं पड़ता, लेकिन जब पानी गिरता है तब चट्टानों के कुछ खनिज घुलकर बह जाते हैं और कुछ खनिजों का रूप बदल जाता है। इस प्रकार प्रकृति में विघटन (टूट-फूट) और अपघटन (घुलन) की क्रियाएँ साथ-साथ अपने ही स्थान पर चलती रहती हैं। इस पूरी प्रक्रिया को ही 'अपक्षय' कहते हैं। इस प्रक्रिया में ऋतुओं का भी सहयोग रहता है इसलिए इसे 'ऋतुअपक्षय' भी कहते हैं।

चित्र-13 : अपक्षय - पिण्ड विच्छेदन

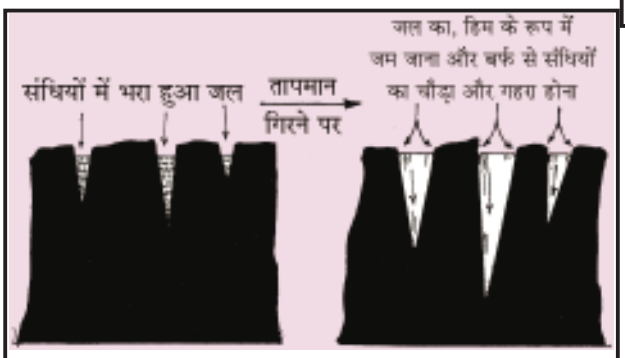

चित्र-14 : तुषार (हिम द्वारा) अपक्षय

अपक्षय एक स्थानीय प्रक्रिया है जिसमें चट्टानों का विघटन और अपघटन उनके मूल स्थान पर ही होता है।

अपक्षय के प्रकार-

अपक्षय तीन प्रकार से होता है-

(1) भौतिक अपक्षय

(2) रासायनिक अपक्षय

(3) जैविक अपक्षय

भौतिक अपक्षय- जब कोई चट्टान बिना किसी रासायनिक परिवर्तन के छोटे-छोटे टुकड़ों में विभक्त हो जाती है तो उसे 'भौतिक अपक्षय' कहते हैं। जब तापमान अत्यधिक बढ़ता है तब चट्टानें फैलती हैं और जब ताप अत्यधिक गिर जाता है तब सिकुड़ जाती है। इस प्रकार फैलने और सिकुड़ने से चट्टाने चटक जाती हैं और उनमें दरारें पड़ जाती हैं। वे दरारें चौड़ी होकर अन्त में टूटकर अलग

हो जाती हैं। कुछ समय बाद इसी प्रक्रिया से उनमें और टूट-फूट होती रहती है। अन्त में उनके टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं।

कुछ गोलाकार चट्टानों की ऊपरी परतें प्याज के छिलकों की तरह उतर-उतर कर वहीं चूरा हो जाती हैं। अधिक ठंडे प्रदेशों में चट्टानों की संधियों में भरा जल तापमान गिरने पर जम जाता है। जमने पर बर्फ का आयतन बढ़ जाता है, जिससे सन्धियाँ और अधिक चौड़ी होती जाती हैं और अन्त में टूट जाती हैं।

रासायनिक अपक्षय- रासायनिक परिवर्तनों के कारण चूना, जिप्सम, गंधक, सेंधा नमक की चट्टानें जल में घुल जाती हैं या बिखर जाती हैं, गल जाती हैं या जंग खा जाती हैं। इस प्रकार चट्टानें अपना मूल स्वरूप खो देती हैं और पानी में घुल कर या चूर्ण हो कर नए पदार्थों को जन्म देती हैं। इस क्रिया को 'रासायनिक अपक्षय' कहते हैं। इसमें नमी और वर्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

जैविक अपक्षय- जैविक अपक्षय वनस्पतियों, जीव-जन्तुओं और मनुष्यों द्वारा होता है। वृक्षों की जड़ें चट्टानों की संधियों में पहुंच कर और अधिक चौड़ा कर उन्हें तोड़ देती हैं। चूहे, दीमक, चीटियाँ, केंचुए और जीव नरम चट्टानों को तोड़ते-फोड़ते और खुरचतें हैं। मनुष्य भी कृषि उपयोग के लिए, भवन निर्माण के लिए, सड़क निर्माण के लिए चट्टानों की तोड़-फोड़ करता है। इस प्रकार के अपक्षय को 'जैविक अपक्षय' कहते हैं।

चट्टानों के विघटन के अलावा अपक्षय का मृदा के निर्माण में भी महत्वपूर्ण योगदान रहता है, क्योंकि विखंडित चट्टानों के महीन कण ही तो मृदा में होते हैं।

तल सन्तुलन या अपरदन चक्र

अपक्षय के साथ-साथ परिवर्तनकारी बाह्य शक्तियाँ जिन्हें अनाच्छादनकारी शक्तियाँ भी कहते हैं। धरातल को समतल करने के लिए निरन्तर क्रियाशील रहते हुए अपरदन, परिवहन और निक्षेपण का कार्य करती हैं। इसे ही अपरदन चक्र कहते हैं। नदियाँ, हिमानियाँ, पवन, भूमिगत जल और समुद्री लहरें तल सन्तुलन के प्रमुख कारक हैं। तल सन्तुलन के कार्य को दो भागों में बाँट सकते हैं। (1) निम्नीकरण और (2) उच्चयन

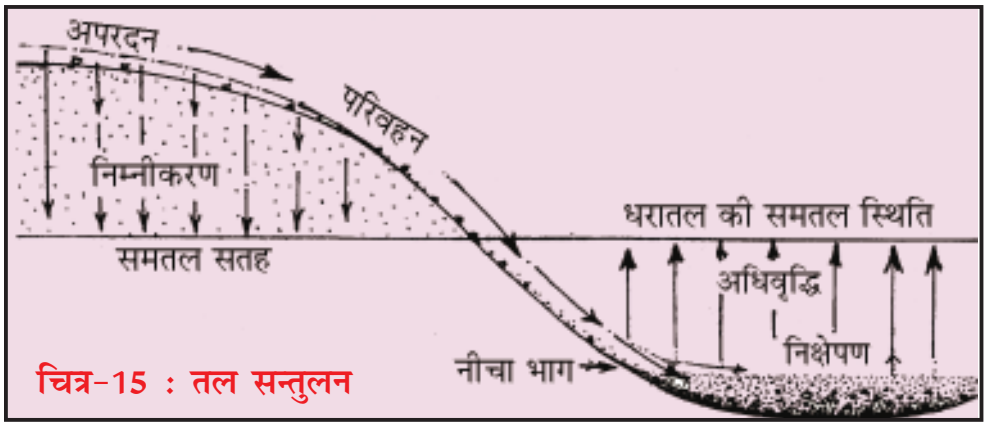

चित्र-15 : तल सन्तुलन

(अधिवृद्धिकरण) अपरदन की प्रक्रिया द्वारा चट्टानों को घिसकर, खुरचकर या काटकर उनको अपने मूल स्थान से हटा दिया जाता है, इससे ऊँचे स्थान धीरे-धीरे नीचे होते जाते हैं। इस प्रक्रिया को निम्नीकरण कहते हैं। (चित्र में देखिए)।

ऊँचे स्थान से विघटित एवं अपघटित पदार्थों को निचले भागों तक ले जाने की क्रिया को परिवहन कहते हैं।

निचले क्षेत्रों या गड्ढ़ों में अपरदित पदार्थों के जमा होते रहने को निक्षेपण कहते हैं। अपरदित पदार्थ गड्ढ़ों में जैसे-जैसे भरता जाता है उसकी ऊँचाई बढ़ती जाती है। इस प्रक्रिया को उच्चयन (अधिवृद्धिकरण) कहते हैं। (चित्र में देखिए)।

- **धरातल के चौरस और समतल होने को तल सन्तुलन कहते हैं। इसमें निम्नीकरण और अधिवृद्धि दोनों क्रियाएँ सम्मिलित हैं।**
- **अपरदन के द्वारा धरातल के घिसने को निम्नीकरण कहते हैं तथा गड्ढों को भरकर ऊंचा करने की प्रक्रिया को अधिवृद्धि कहते हैं।**

बहते हुए जल अथवा नदी के कार्य

वर्षा जल का कुछ भाग वाष्प बनकर वायुमण्डल में उड़ जाता है, कुछ भाग भूमि के अन्दर रिस जाता है तथा अधिकांश भाग धरातल पर बहता हुआ नदी-नालों में पहुँच जाता है। बहता हुआ यही जल नदी के रूप में तल सन्तुलन का महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करता है। नदियों का कार्य क्षेत्र बहुत व्यापक होता है। नदियाँ अपने उद्गम से लेकर मुहाने तक विभिन्न स्तरों पर अपने कार्यों से विभिन्न प्रकार की स्थलाकृतियों का निर्माण करती हैं।

नदियों का प्रवाहित जल तीन तरह से धरातल को प्रभावित करता है, जिन्हें नदी के तीन कार्य कहा जाता है- (1) अपरदन (2) परिवहन और (3) निक्षेपण

अपरदन

बहती हुई नदी का जल अपनी शक्ति के द्वारा अपने मार्ग में आने वाले विखंडित चट्टानी पदार्थों को नीचे की ओर ले जाता है। नदी मार्ग में ये पदार्थ अपक्षय और अपरदन की क्रियाओं द्वारा आते हैं। इन पदार्थों को 'नदी का भार' कहा जाता है। यही भार, घर्षण के औजारों के रूप में काम करता है। ये पदार्थ नदी के तल तथा किनारों को घिसकर काटने का काम करते हैं, जिससे नदी की तली गहरी और पाट चौड़ा होता जाता है। इस प्रक्रिया को ही 'अपरदन' कहते हैं। अपरदन कार्य नदी में जल की मात्रा, नदी का वेग, नदी का ढाल और चट्टानों की बनावट पर निर्भर करता है। नदी अपरदन

चार प्रकार से होता है-

1. **अपघर्षण**- बहाव के साथ चट्टानी टुकड़े तली और किनारों को खुरचते और घिसटते चलते हैं। इस प्रक्रिया को अपघर्षण कहते हैं।
2. **घुलन**- नदी जल के सम्पर्क में आने वाली घुलनशील चट्टानों पर रासायनिक प्रक्रिया द्वारा घुले पदार्थ जल के साथ बह जाते हैं।
3. **भौतिक दाब शक्ति द्वारा**- नदी जल बहता हुआ अपनी शक्ति से चट्टानों को संधियों-जोड़ों से ढीला कर उनके टुकड़ों को लुढ़काता हुआ ले जाता है। इस कार्य में नदी का जल किनारों से टकराता हुआ वहाँ जमी चट्टानों को ढीला कर अपने साथ बहा ले जाता है।
4. **सन्नि घर्षण**- लुढ़कते हुए कंकड़-पत्थर आपस में एक-दूसरे से टकराते चलते हैं जिससे उनमें और अधिक टूट-फूट और आपसी घर्षण होता रहता है। नुकीले टुकड़ों का आकार घिसकर, रगड़ाकर गोल और छोटा होता जाता है।

इन चारों प्रक्रियाओं से नदी धरातल पर विभिन्न स्थलाकृतियों का निर्माण करती है।

नदी अपरदन से निर्मित स्थलाकृतियाँ

नदी के ऊपरी भाग में अपरदन का कार्य अधिक सम्पन्न होता है। इससे महाखड्ड या गार्ज, केनियन और वी (V) आकार की घाटी, जल गर्तिका, क्षिप्रिकाएँ और जलप्रपात का निर्माण होता है। इनमें से महाखड्ड, वी (V) आकार की घाटी तथा जलप्रपात मुख्य है।

महाखड्ड- अपने ऊपरी भाग में, उद्गम के पास और अपनी युवावस्था में नदी का प्रमुख कार्य अपनी घाटी को गहरा करना होता है। इस भाग में जल वेग अधिक होने से चट्टानों के टुकड़े अपनी तली को खुरच-खुरच कर गहरा करते रहते हैं। इसके कारण गहरी कन्दराएँ, महाखड्ड और केनियन का निर्माण होता है। जबलपुर के पास भेड़ाघाट का महाखड्ड दर्शनीय है। उत्तरी अमेरिका में कोलोरेडो का ग्राण्ड केनियन तो विश्वविख्यात है।

वी (V) आकार की घाटी- नदी के अपरदन कार्य का लक्ष्य अपने आधार तल तक पहुँचना होता है। उस झील या समुद्र के तल को जिसमें वह गिरती है नदी अपरदन का 'आधार तल' कहते हैं। नदी अपनी घाटी को गहरा और किनारों को चौड़ा करती है, जिससे वी (V) आकार की घाटी का विकास होता है।

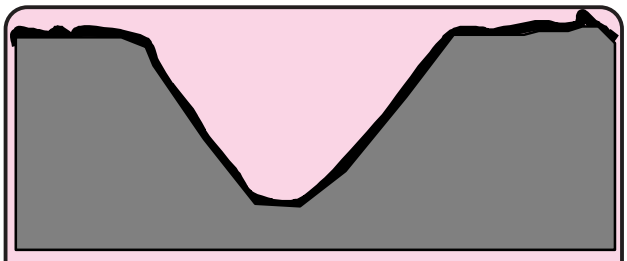

चित्र-16 : वी (V) आकार की घाटी

जलप्रपात- जब नदी का जल किसी चट्टानी कगार पर ऊपर से सीधा नीचे गिरता है तो उसे जलप्रपात कहते हैं। यदि नदी के मार्ग में कोई कठोर चट्टान लम्बवत खड़ी पाई जाती है तो स्थाई जलप्रपात का जन्म होता है। ऊपर से गिरने वाला जल अपनी अपरदन शक्ति से नीचे की कोमल चट्टानों को तेजी से काटता है। जिससे जलधारा के नीचे गहरा गड्ढ़ा बन जाता है।

चित्र-17 : जलप्रपात

- **नदी मार्ग के तीन भाग होते हैं–ऊपरी भाग, मध्य भाग और निचला (निम्न) भाग**
- **नदी की तीन अवस्थाएं होती हैं – युवावस्था, प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था**
- **नदी के तीन कार्य क्षेत्र – ऊपरी भाग में अपरदन एवं परिवहन, मध्य भाग में परिवहन, अपरदन और निक्षेपण तथा निम्न भाग में निक्षेपण होते हैं।**

परिवहन कार्य- नदी चट्टानी पदार्थों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर अपने साथ बहाकर ले जाती हैं। इस क्रिया को नदी द्वारा भार वहन कहा जाता है। नदी की परिवहन क्षमता उसके वेग, जल की मात्रा और भार वहन में शामिल प्रस्तर खण्डों, कंकरों पर निर्भर होती है। नदी का वेग बढ़ने पर परिवहन क्षमता भी तेजी से बढ़ जाती है।

- **नदी की परिवहन क्षमता उसके वेग, जल की मात्रा तथा उसमें बहने वाले टुकड़ों-कणों के आकार पर निर्भर करती है।**
- **यदि नदी के जल का वेग दुगुना हो जाए तो उसकी परिवहन क्षमता 64 गुना बढ़ जाती है।**
- **यदि जल की मात्रा दुगुनी हो जाए तो परिवहन क्षमता केवल दुगुनी ही बढ़ती है।**
- **नदी बड़े और नुकीले, खुरदरे पदार्थों की तुलना में महीन कणों को अधिक दूरी तक और अधिक मात्रा में ढो सकती है।**

निक्षेपण कार्य- जब नदी पर्वतीय भाग से निकलकर मैदानी भाग में प्रवेश करती तो मन्द ढाल होने से उसकी प्रवाह गति मंद पड़ जाती है। इसके साथ उसकी भार वहन शक्ति में भी कमी हो जाती है। इसके परिणाम स्वरूप भार का कुछ अंश निचले भागों में जमा होने लगता है। इस क्रिया को 'निक्षेपण' कहते हैं। निक्षेपण क्रिया सामान्यत: मैदानी या निम्न क्षेत्रों में होती है। जब नदी किसी झील या समुद्र में मिलती है तो अपने मुहाने पर सारा भार या अवसाद जमा कर देती है।

नदी अपना निक्षेपण कार्य मध्यवर्ती मैदानी भाग और निचले भाग में सम्पन्न करते हुए जलोढ़ पंख एवं शंकु, गोखुर झील, तटबन्ध व मैदान की रचना करती है।

1. जलोढ़ पंख- नदी ढाल पर्वतीय भाग से जैसे ही समतल मैदानी भाग में प्रवेश करती है उसका वेग घटने से उसकी भार वहन क्षमता मंद हो जाती है। इससे वजनी पदार्थ घाटी के मुख के बाहर अर्द्धवृत्ताकार पंख के रूप में जमा हो जाते हैं, जिसे जलोढ़ पंख कहते हैं।

चित्र-18 : जलोढ़ पंख एवं शंकु

2. गोखुर झील- जब नदी खुले समतल मैदान में बहती है तो उसके प्रवाह का वेग बहुत ही मंद हो जाता है। जरा सी रूकावट से प्रवाह इधर-उधर मुड़ जाता है। यहाँ नदी मार्ग अत्यंत घुमावदार हो जाता है। इन घुमावों को विसर्प कहते हैं। विसर्पों के निचले किनारों पर निक्षेपण तथा ऊँचे किनारों पर कटाव होने से इनका आकार अंग्रेजी के अक्षर 'एस' (S) की भांति हो जाता है। कालान्तर में नदी की धारा विसर्प को छोड़ कर सीधे सामने वाले भाग से मिल जाती है। ऐसी स्थिति में छूटा हुआ जल भरा भाग एक झील के रूप में रह जाता है। इसका आकार गाय के खुर की तरह होता है। अतः इसे गोखुर झील कहते हैं।

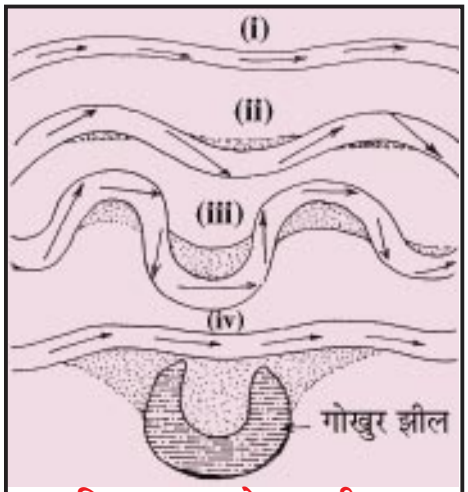

चित्र-19 : गोखुर झील

3. तटबंध और बाढ़ का मैदान- मैदानी भाग में नदी के दोनों किनारों पर बने लम्बे टीलों को प्राकृतिक 'तट बंध' कहते हैं। कई बार नदी बाढ़ आने पर जल तटबंधों के ऊपर से निकल कर दूर-दूर तक फैल जाता है। यह ठहरा हुआ जल अपने साथ लाए महीन कण विस्तृत भाग में जमा कर देता है। जब बाढ़ का पानी उतर जाता है, तब मिट्टी की परत चारों ओर जमा हो जाता है, इसे 'बाढ़ का मैदान' कहते हैं। भारत में गंगा-ब्रह्मपुत्र का मैदान इसी प्रकार बना है।

4. डेल्टा - जब नदी निचले भाग में किसी झील या समुद्र में मिलती है तो उसका वेग बहुत ही मंद हो जाता है- जैसे जल प्रवाह रूक-सा गया हो। ऐसी अवस्था में नदी अपना समस्त महीन कणों वाला

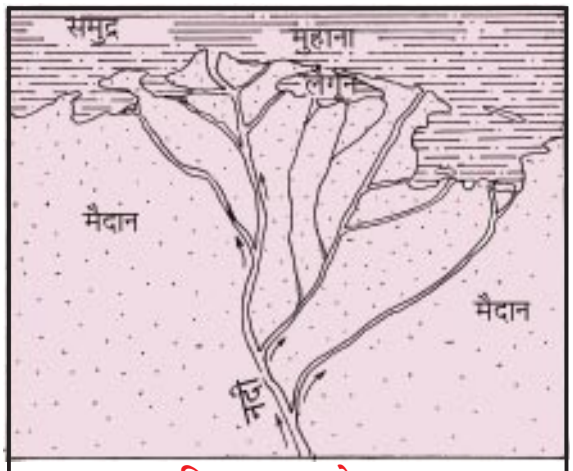

चित्र-20 : डेल्टा

भार, मुहाने पर बिछा देती है। नदी की धारा अनेक उपधाराओं में विभक्त हो जाती है। इस प्रकार बनी त्रिभुजाकार आकृति को डेल्टा कहते हैं। डेल्टा कई आकार वाले होते हैं जैसे-पंखाकार डेल्टा, पंजाकार डेल्टा, चाँपाकार डेल्टा। गंगा-ब्रह्मपुत्र का डेल्टा, नील नदी का डेल्टा, मिसीसिपी का डेल्टा विश्वविख्यात है।

5. एश्चुअरी (ज्वारनद मुख)- समुद्र में गिरने वाली कुछ नदियाँ अपने मुहाने पर डेल्टा नहीं बनाती। ऐसी नदियों का मुहाना समुद्र की ओर क्रमशः चौड़ा होता जाता है। ऐसे मुहाने पर ज्वार-भाटा और समुद्री धाराएँ यहाँ के सारे अवसादों को गहरे समुद्र में बहा ले जाती है। अधिकांश मुहाने का भू-भाग नीचा होता है। ऐसी स्थलाकृति को ज्वारनद मुख या एश्चुअरी कहते हैं। भारत की नर्मदा नदी तथा ताप्ती नदी अपने मुहाने पर एश्चुअरी (ज्वारनद मुख) बनाती है।

हिमानी के कार्य

जिन प्रदेशों में तापमान सदैव हिमांक से नीचे रहता है वहाँ वर्षा हिम के रूप में होती है जिसे 'हिमपात' कहते हैं। ऐसे प्रदेश हिमाच्छादित प्रदेश कहलाते हैं। वहाँ सदैव हिम की परत जमी रहती है। हिम क्षेत्रों की स्थिति सदैव हिम रेखा से ऊपर होती है। हिमरेखा एक ऐसी समताप रेखा है जिसके ऊपर हिम का स्थाई क्षेत्र पाया जाता है। हिम रेखा की ऊँचाई भूतल पर सर्वत्र एक समान नहीं रहती। ध्रुवीय प्रदेशों में हिम रेखा समुद्र की सतह के पास पाई जाती है, जबकि उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में वह अधिक ऊँचाई पर रहती है। हिमालय पर 4250 मीटर की ऊँचाई पर हिमरेखा पाई जाती है। हिम की गतिशील राशि को हिमानी कहा जाता है।

हिमानियों के प्रकार

खिसकती हुई हिम राशि को 'हिमानी' या 'हिमनदी' कहते हैं। उत्पत्ति क्षेत्रों तथा स्थिति के आधार पर हिमानियाँ दो वर्गों में विभाजित की जा सकती हैं:-

(1) महाद्वीपीय हिमानी और (2) घाटी हिमानी।

1. महाद्वीपीय हिमानियाँ- हिमाच्छादित बड़े क्षेत्रों को महाद्वीपीय हिमानी कहते हैं। ऐसी हिमानियाँ ग्रीनलैण्ड और अन्टार्कटिका में पाई जाती हैं।

2. घाटी हिमानी- ऊँचे पर्वतीय भागों में हिम राशि किसी घाटी में खिसकने लगती है तो ऐसी हिमानी को 'घाटी हिमानी' या 'पर्वतीय हिमानी' कहते हैं। भारत की सबसे लम्बी हिमानी काराकोरम पर्वत श्रृंखला में सियाचीन हिमानी (ग्लेशियर) है जो 72 किलोमीटर लम्बी है। हिमानियों के खिसकने की गति बहुत ही मंद होती है।

हिमानी द्वारा निर्मित स्थलाकृतियाँ- बहते हुए जल और भूमिगत जल की तरह हिमानी भी अपरदन, परिवहन और निक्षेपण का कार्य सम्पन्न करती हैं।

अपरदन कार्य- हिमानी जब आगे सरकती है तब इसके साथ प्रस्तर खण्ड, कंकड, रेत-बजरी भी घिसटते चलते हैं। ये पदार्थ अपरदन कार्य में औजार का काम करते हैं। हिमानी के अपरदन से हिम गव्हर, 'यू' आकार की घाटी, लटकती घाटी, हिमज झील आदि का निर्माण होता है।

चित्र-21 : यू (U) आकार की घाटी

परिवहन कार्य- हिमानी बहुत ही मंद गति से खिसकती है। वह अपने साथ छोटे-बड़े शिलाखण्ड, कंकड-पत्थर, रेत एवं मिट्टी को घसीट कर ले जाती है। इन पदार्थों को हिमानी का भार कहते हैं।

निक्षेपण कार्य- जब हिमानी पिघलती है अथवा पिघलकर पीछे हटती है, तब वह अपने साथ लाए पदार्थों को घाटी के विभिन्न भागों में जमा कर देती है। इस प्रकार के निक्षेपित पदार्थों को 'हिमोढ़' कहते हैं। घाटी में स्थिति के आधार पर हिमोढ़ चार प्रकार के होते हैं:- (1) अन्तस्थ हिमोढ़, (2) पार्श्विक हिमोढ़, (3) मध्यस्थ हिमोढ़ तथा (4) तलस्थ हिमोढ़ (देखें चित्र)।

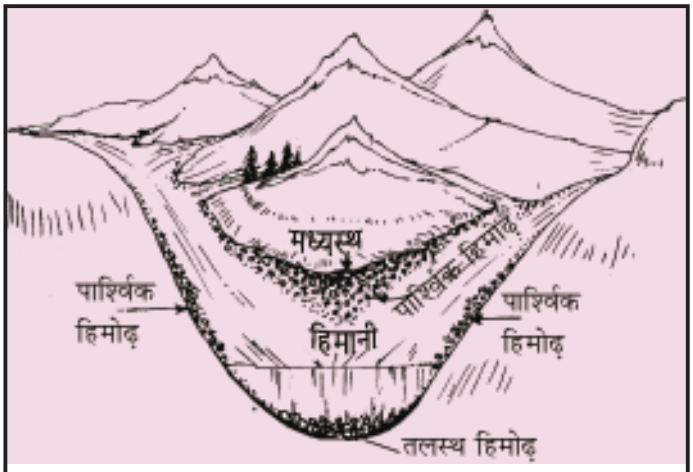

चित्र-22 : हिमानी एवं हिमोढ़

1. **अन्तस्थ हिमोढ़**- जब हिमानी पिघलती है तब मलवा घाटी हिमानी के अन्तिम छोर में जमा हो जाता है और कटक जैसी स्थलाकृति बन जाती है, इसे अन्तस्थ हिमोढ़ कहते हैं। इसमें मिट्टी से लेकर नुकीले और गोल शिलाखण्ड भी होते हैं।

2. **पार्श्विक हिमोढ़**- हिमानी के दोनों किनारों पर जो हिमोढ़ जमा हो जाते हैं उन्हें पार्श्विक हिमोढ़ कहते हैं।

3. **मध्यस्थ हिमोढ़**- जब दो हिमानियाँ विभिन्न दिशाओं से आकर मिल जाती है तो प्रत्येक हिमानी का एक-एक पार्श्विक हिमोढ़ भी आपस में मिल जाता है। इस प्रकार मिलन स्थल पर बने हिमोढ़ को मध्यस्थ हिमोढ़ कहते हैं।

4. **तलस्थ हिमोढ़**- ये वे निक्षेपित पदार्थ होते हैं जो उन क्षेत्रों में जमा हो गए थे जो कभी हिमानियों से ढंके थे। ये तभी दिखाई पड़ते हैं जब हिमानियाँ पिघलकर जल रूप में बहने लगती है।

भूमिगत जल के कार्य

धरातल पर बरसने वाले वर्षा जल का कुछ अंश पर्वत शिखरों पर बर्फ के रूप में जम जाता है। कुछ वायुमण्डल में वाष्प बनकर उड़ जाता है। कुछ नदी-नालों में बहकर समुद्र में चला जाता है और कुछ जल रिसकर भूमि में चला जाता है। भूमि में एकत्र होकर बहने वाला जल भूमिगत जल कहलाता है। नदियों, झीलों और समुद्र का भी कुछ जल भूमि के अंदर रिसकर पहुँच जाता है।

- **वर्षा का जल और हिम से पिघला जल जब रिसकर भूमि के अंदर एकत्रित हो जाता है तो वह भूमिगत जल कहलाता है।**
- **ऐसी चट्टानें जिनमें जल आसानी से प्रवेश कर जाता है पारगम्य चट्टान तथा जिन चट्टानों में जल प्रवेश नहीं कर पाता वे अपारगम्य चट्टानें कहलाती हैं।**
- **भू गर्भ स्थित जल भी ढलान की ओर प्रवाहित होने लगता है।**

भूमि में एकत्रित जल की मात्रा सर्वत्र एक समान नहीं होती। भूमिगत जल का मुख्य कार्य धरातल के नीचे भू-गर्भ में सम्पन्न होता है। कुछ अंशों में धरातल के ऊपर की स्थलाकृतियों में भी भूमिगत जल प्रकट होता है। स्रोत (झरना), पाताल तोड़ कुएँ एवं गीजर ऐसी ही स्थलाकृतियाँ हैं।

भूमिगत जल को धारण करने वाली चट्टानों को 'संतृप्त चट्टान' कहते हैं। भूमिगत जल का वह तल जिसके नीचे चट्टानें जल से पूरी तरह से भरी होती हैं भूमिगत 'जल स्तर' कहलाता है।

चित्र-23 : पातालतोड़ कुँआ

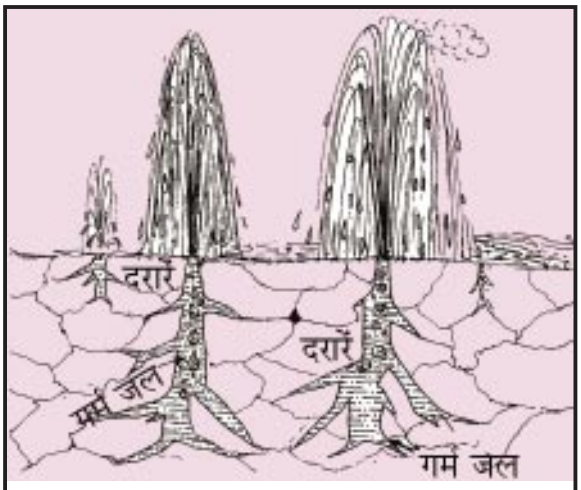

चित्र-24 : गीजर

- **चट्टानों (शैलों) की दरारों अथवा छिद्रों से द्रव चलित दबाव के कारण भूमिगत जल स्वतः धरातल पर निकलने को जलस्त्रोत कहते हैं।**

- **भूगर्भिक गर्मी से जिन गर्म जलस्त्रोतों का जल बड़े वेग से फव्वारे की भांति बाहर फूट पड़ता है उनको 'गीजर' कहते हैं। उत्तरी अमेरिका के यलोस्टोन नेशनल पार्क का ओल्डफेथफुल गीजर विश्व प्रसिद्ध गीजर है।**

भूमिगत जल भी तल सन्तुलन का एक कारक है। इसके अपरदन, परिवहन एवं निक्षेपण कार्यों से अनेक स्थलाकृतियों का निर्माण होता है। भूमिगत जल अपना कार्य विशेष रूप से चूना प्रदेश में संपन्न करता है। चूना पत्थर से निर्मित स्थलाकृति को **'कार्स्ट स्थलाकृति'** कहते हैं। चूने का पत्थर एक ऐसी चट्टान है जो वर्षा के जल में शीघ्रता से घुल जाती है क्योंकि उसमें कार्बन डाईऑक्साइड मिली हुई होती है। वर्षा जल ऊपरी धरातल से चूने की चट्टानों में होकर भूमि के नीचे धाराओं के रूप में बहने लगता है। जिन चट्टानों में यह धरातलीय जल भूमि में प्रवेश कर बहता है वहाँ चट्टानों में अपरदन कार्य सम्पन्न होता है। भूमिगत जल द्वारा किए गए अपरदन को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है:-(1) धरातल के ऊपर की तथा (2) धरातल के नीचे की स्थलाकृतियाँ।

धरातल के ऊपर निर्मित आकृतियों में घोल रन्ध्र और विलय रंध्र प्रमुख हैं। धरातल के नीचे बनने वाली स्थलाकृतियाँ-कन्दराएँ, स्टेलैक्टाइट (आकाशीय स्तम्भ) और स्टेलैग्माइट (पातालीय स्तम्भ) प्रमुख हैं। ये आकृतियाँ चूना मिश्रित जल के निरन्तर टपकने से बनती हैं। जल अंश के बह जाने पर चूना जमता जाता है और एक स्तंभ का आकार ले लेता है। ऐसी आकृतियाँ यूरोप के एड्रियाटिक सागर के तट पर गुफाओं में पाई जाती हैं। बस्तर क्षेत्र में भी ऐसी गुफाएँ मिली हैं जिसमें ऐसी चूना निर्मित स्थलाकृतियाँ पाई गई हैं।

चित्र-25 : आकाशीय एवं पातालीय स्तंभ

घोलरन्ध्र- जल में घुलन क्रिया के कारण चूने की चट्टानों में बनी दरारें बड़ी होने पर घोल रन्ध्र का रूप धारण कर लेती हैं। भारत के मेघालय प्रदेश में ऐसे अनेक घोल रन्ध्रों के कारण सड़कें और रेलमार्ग बनाने में कठिनाइयाँ आती हैं।

विलय रन्ध्र- घोल रन्ध्रों के नीचे लम्बी नालियों को विलय रन्ध्र कहते हैं। ऐसी रन्ध्रें भूमिगत मार्गों द्वारा बड़ी-बड़ी कन्दराओं से जुड़ी रहती हैं।

कन्दराएँ- घुलन क्रिया द्वारा धरातल के नीचे की गुफाएँ, कन्दराएँ कहलाती हैं। ऐसी कन्दराएँ बस्तर जिले में तथा हिमालय की तलेटियों में पाई जाती हैं।

निक्षेपण- कन्दराओं में निक्षेपण से निर्मित स्थलाकृतियाँ- स्टैलेक्टाइट (आकाशीय स्तम्भ) तथा 'स्टैलेग्राइट' (पातालीय स्तम्भ) हैं।

- **चूने की चट्टानों के प्रदेश में भूमिगत कन्दराओं की छत से लटकती हुई ठोस और नुकीली स्तंभाकार आकृति को 'स्टैलेक्टाइट' या आकाशीय स्तम्भ कहते हैं। तथा इसी प्रकार कन्दराओं में फर्श पर चूना मिश्रित जल के टपकने से संग्रहित होकर निर्मित ऊपर की ओर उठे हुए स्तम्भों को 'स्टैलेग्माइट' या पातालीय स्तम्भ कहते हैं।**

पवन के कार्य

तल सन्तुलन के कारक के रूप में पवन मरूस्थलीय प्रदेशों में अधिक सक्रिय होती है। इन क्षेत्रों में पवन को अपने कार्य निर्विघ्न सम्पन्न करने के लिए अनुकूल दशाएँ मिलती हैं। मरूस्थलीय प्रदेशों में वर्षा की कमी, उच्च तापमान, तेज हवाएँ, वनस्पति का अभाव ऐसी ही अनुकूल दशाएँ हैं। इन प्रदेशों में तापमान की अधिकता से खुली चट्टानें दिन में गर्म होकर फैलती हैं तथा रात में तापमान के अत्यधिक गिरने के कारण ठंडी होकर सिकुड़ने लगती है। फैलने और सिकुड़ने से चट्टानें टूटती रहती हैं। अन्त में छोटे-छोटे कणों में विभक्त हो जाती हैं। यह क्रिया अपक्षय द्वारा सम्पन्न होती हैं।

अपरदन

मरूस्थलीय भागों में पवन वेगवान होती है। वह अपने साथ कंकड़ों और बालू कणों को दूर तक उड़ा ले जाती हैं। पवन के साथ लुढ़कते-उड़ते हुए ये कण आपस में एक-दूसरे से घर्षण करते तथा सम्मुख चट्टानों से टकराते हुए उसे खरोचते हैं। अपरदन का यह कार्य अपघर्षण, सन्निघर्षण और अपवाहन के रूप में सम्पन्न होता है।

1. **अपवाहन**- चट्टान कणों को उड़ाकर ले जाने की क्रिया।
2. **सन्निघर्षण**- पवन में उड़ते कणों का परस्पर टकराते हुए विखंडित होना।
3. **अपघर्षण**- रेत कणों से युक्त पवन द्वारा चट्टानों को रगड़-रगड़कर घिसने की क्रिया।

पवन अपदन के ये कार्य प्रभावित होते हैं-

1. पवन की गति से,
2. कणों के आकार, मात्रा व ऊँचाई से,
3. चट्टानों की संरचना व बनावट से तथा
4. जलवायु से।

पवन अपरदन से छत्रक, यारदांग की आकृतियाँ बनती हैं।

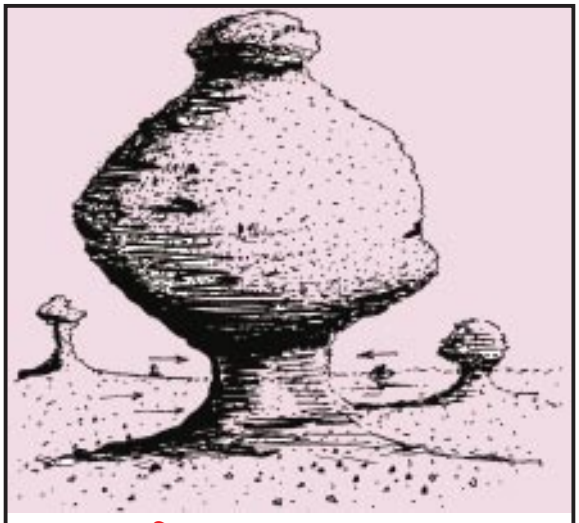

चित्र-26 : छत्रक

निक्षेपण– अपरदित पदार्थों को पवन अपने साथ परिवहन द्वारा दूर तक उड़ा ले जाती है। जैसे ही पवन का वेग कम होता है या कोई अवरोध आता है– निक्षेपण प्रारंभ हो जाता है। निक्षेपण से बालू के टीले, बरखान और लोएस स्थलाकृतियों का निर्माण होता है।

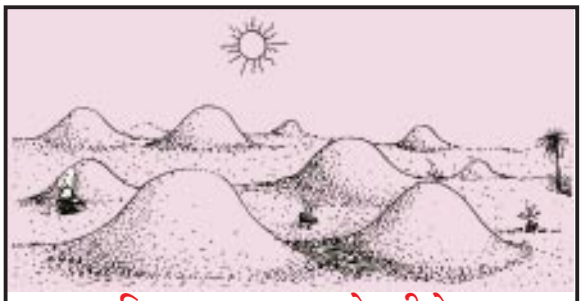

चित्र-27 : बालू के टीले

बालू के टीले– बालू मिश्रित पवन के मार्ग में अवरोध आने पर बालू के ढेर टीलों के रूप में निर्मित होते हैं। ये अर्द्ध चन्द्रकार टीले होते हैं। जहाँ सदैव एक ही दिशा से हवा बहती है ये वहीं बनते हैं।

लोएस– अत्यंत महीन बालू मृदा के साथ बहुत दूर जाकर जमा होती है और इस तरह जिस मैदान की रचना होती है उसे लोएस कहते हैं। चीन का लोएस का मैदान इसका अच्छा उदाहरण है।

समुद्री लहरों के कार्य

समुद्र का जल कभी शान्त नहीं रहता। वह लहरें, धाराएँ और ज्वार-भाटा के रूप में सदैव गतिशील रहता है। इसके निरंतर प्रभाव से तटीय भागों में अनेक प्रकार की स्थलाकृतियाँ बनती रहती हैं। तटीय प्रदेशों में समुद्री लहरें तल सन्तुलन का प्रभावी कारक भी है। लहरें समुद्री तट पर अपरदन (काटने), कटे हुए पदार्थों को बहाकर ले जाने (परिवहन) तथा उसे किसी तट पर जमा करने (निक्षेपण) का कार्य सम्पन्न करती हैं।

अपरदन– समुद्र की शक्तिशाली लहरें निरन्तर तटीय भागों पर स्थित कठोर चट्टानों पर प्रहार करती रहती हैं। अपरदन के इस कार्य में चट्टानों के छोटे-छोटे नुकीले टुकड़े तथा बालू के कण लहरों के साथ औजार का कार्य करते हैं। इनके कारण चट्टानों के अपरदन से समुद्री भृगु, समुद्री गुफाएँ, मेहराबें, स्तम्भ आदि स्थलाकृतियों का निर्माण होता है।

चित्र-28 : भृगु

परिवहन– लहरें अपने साथ बालू कणों और चट्टानों के टुकड़ों को बहाकर लाती भी हैं और विखण्डित टुकड़ों को ले भी जाती हैं।

निक्षेपण– समुद्र की लहरें अपेक्षाकृत सपाट और समतल तटों पर निक्षेपण का कार्य सम्पन्न करती हैं। इसके परिणामस्वरूप तटों पर अनेक स्थलाकृतियों की रचना होती है, जैसे– पुलिन (बीच), रोधिका, लैगून आदि।

पुलिन– समुद्री लहरें अपरदित पदार्थों को तट के निकट उथले समुद्र में जमा करती हैं। कुछ

समय बाद वह डूबा हुआ क्षेत्र, निक्षेपण होते रहने से, बाहर प्रकट हो जाता है। कंकड़, बालू, बजरी का एक समतल सा तटीय मैदान बन जाता है, जिसे 'पुलिन' कहते हैं। मुम्बई में चौपाटी, चैन्नई में मरीना, गोवा तथा केरल के तटों पर अनेक पुलिन पाए जाते हैं। पुलिन को 'बीच' भी कहते हैं।

चित्र-29 : रोधिका, पुलिन और लैगून झील

रोधिका- कहीं-कहीं तट के समानान्तर बालू-कंकड़ से निक्षेपित लम्बी पट्टी बन जाती है। इसका एक सिरा तट से जुड़ा रहता है और दूसरा मुँह तट के समानान्तर दूर तक चला जाता है। मानों कोई अवरोध बना दिया हो। ऐसी आकृति को 'रोधिका' कहते हैं।

लैगून- कभी-कभी समुद्री लहरों द्वारा निक्षेपण से रोधिका के दोनों छोर एक-दूसरे से जुड़ जाते हैं। और जल का कुछ भाग तट और रोधिका के बीच घिरा हुआ रह जाता है। खारे जल की भरी हुई ऐसी स्थलाकृति को लैगून कहते हैं। लैगून एक समुद्र तटीय झील होती है। उड़ीसा के तट पर चिल्का झील, पूर्वी तट पर पुलीकट झील और पश्चिमी तट पर केरल की बेम्बनाड झील लैगून के उदाहरण है।

मृदा का निर्माण, कटान एवं संरक्षण

मृदा, जैव तथा अजैव पदार्थों से बनी एक परिवर्तनशील और उत्पादक (उर्वर) पतली परत है, जो भू-पृष्ठ को ढके हुए हैं। मृदा की परत वनस्पति के आवरण को बनाए रखने में मदद देती है। मानव जीवन और प्राचीन सभ्यताओं के विकास में मृदा की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

मृदा निर्माण के प्रमुख कारक

चट्टानों के अपक्षय और अपरदन क्रिया द्वारा मृदा का निर्माण होता है। मृदा निर्माण में सहायक कारकों में मुख्य हैं – मूल चट्टानें, धरातलीय बनावट, जलवायु, समय एवं वनस्पति व जीव-जन्तु।

मूल चट्टानें- ये चट्टानें विभिन्न खनिजों के मूल पदार्थों से निर्मित होती हैं। मूल चट्टानें भौतिक, रासायनिक और जैविक प्रक्रियाओं द्वारा अपघटित होती हैं। इससे मृदा के अजैव खनिज कणों का निर्माण होता है। मूल चट्टान ही मृदा निर्माण के रासायनिक संगठन, रंग, बनावट, खनिज अंश तथा उर्वरता को प्रभावित करने में सहायक होती है।

धरातलीय स्वरूप- मृदा निर्माण में सहायक होने वाली क्रियाएँ प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से धरातलीय बनावट से प्रभावित होती हैं। तीव्र ढाल वाले क्षेत्रों में भूमि में पानी का रिसाव कम होने से मृदा निर्माण प्रक्रिया धीमी होती है, क्योंकि पानी तेजी से बह जाता है। इसके विपरीत मन्द ढाल वाले क्षेत्रों में जल की बहाव गति धीमी होती है इससे जल द्वारा मृदा निर्माण कार्य अधिक होता है।

अत: मैदानी क्षेत्रों में पूर्ण विकसित उपजाऊ मृदा का निर्माण होता है।

समय- मृदा के निर्माण में भौतिक, रासायनिक और जैविक प्रक्रियाएँ बहुत लम्बे समय तक कार्य करती हैं। इसलिए मृदा निर्माण में बहुत लम्बा समय लगता है।

जलवायु- मृदा निर्माण की प्रक्रिया में जलवायु सबसे अधिक महत्वपूर्ण कारक है जो स्वतन्त्र रूप से काम करता है। वास्तव में मृदा का निर्माण चट्टानी मूल पदार्थ जैसे निष्क्रिय घटक और जलवायु जैसे सक्रिय घटक की परस्पर क्रियाओं प्रतिक्रियाओं द्वारा होता है। जलवायु जैविक प्रक्रियाओं को प्रभावित करता है। दो भिन्न प्रकार की जलवायु दशाओं में एक ही प्रकार की मूल चट्टानों से भिन्न-भिन्न प्रकार की मृदाओं का निर्माण होता है।

वनस्पति एवं जीव जन्तु- पेड़-पौधे तथा जीव जन्तु मूल चट्टानी पदार्थों को विकसित मृदा में बदलने में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। सड़े-गले पेड़-पौधों तथा मृत जीव-जन्तुओं के अवशेषों से मृदा में जैविक अंश बनते है। अपघटन तथा जैविक प्रक्रियाओं के सहयोग से जैव पदार्थ ह्यूमस के रूप में बदल जाते हैं। ह्यूमस से ही मृदा उपजाऊ बनती है। ह्यूमस के द्वारा ही वनस्पतियों और फसलों को पोषण मिलता है।

मृदा परिच्छेदिका

पूर्ण विकसित मृदाओं के लम्बवत् परिच्छेद (कटान) में गठन, रंग और परते एक के ऊपर एक बिछी होती हैं। मृदा की परतों के विन्यास को 'मृदा परिच्छेदिका' कहते हैं (देखिए चित्र)। ऊपरी परत को 'ऊपरी मृदा', दूसरी परत को 'उप मृदा', तीसरी परत को अपक्षयित मूल चट्टानी पदार्थ, तथा चौथी परत में मूल चट्टानें होती हैं।

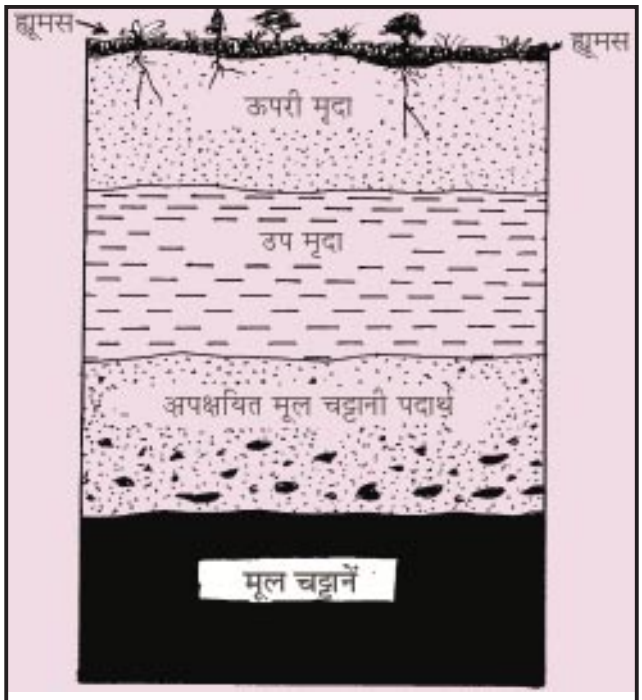

चित्र क्र.-30 : मृदा परिच्छेदिका

ऊपरी परत की ऊपरी मृदा ही वास्तविक मृदा की परत है। इसकी सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें ह्यूमस तथा जैव पदार्थ पाए जाते हैं। सबसे ऊपर ह्यूमस और उसके नीचे जैव तत्वों की प्रधानता होती है। दूसरी परत में उप मृदा होती है, जिसमें चट्टानों के टुकड़े, बालू, गाद और चिकनी मिट्टी होती है। तीसरी परत में अपक्षयित मूल चट्टानी पदार्थ तथा चौथी परत में मूल चट्टानी पदार्थ होते हैं।

मृदा अपरदन– मृदा की ऊपरी परत मानव के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण और उपयोगी संसाधन है। मनुष्य और जीव जन्तु अपने कार्यों के द्वारा मृदा के विनाश के कारण बनते हैं। इनके कारण मृदा या तो कट-कटकर बह जाती है या नष्ट या अनुपयोगी हो जाती है। मृदा पदार्थों के अत्यधिक विनाश और कटाव की इस क्रिया को मृदा अपरदन कहते हैं।

- **प्राकृतिक शक्तियों या मानवीय क्रियाओं से मृदा के आवरण को हटाने को 'मृदा अपरदन' कहते हैं।**

मृदा अपरदन के कारण

मृदा को सबसे बड़ी क्षति अपरदन के कारण होती है। जब भूमि से वनस्पति का आवरण हट जाता है तो मृदा की ऊपरी परत ढीली पड़ जाती है। तेज वर्षा के साथ मृदा के कण बह जाते हैं और तेज हवा के साथ उड़ जाते हैं। पशुओं की अत्यधिक चराई, वनों की अन्धाधुंध कटाई के कारण मृदा अपरदन होता है। इसके अतिरिक्त अत्यधिक उर्वरकों का प्रयोग, कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग तथा अनियत्रित सिंचाई के कारण उपजाऊ मृदा बेकार होती जा रही है।

मृदा संरक्षण– मृदा मानव के लिए एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है। यह विभिन्न प्रकार के जीवों का भरण-पोषण करता है। मृदा अपरदन से विनाशकारी बाढ़ें आती हैं। फसलों के उत्पादन में रूकावट आती है। भूमि वनस्पति विहीन हो जाती है। अत: उसका संरक्षण आवश्यक है। मृदा संरक्षण से तात्पर्य उन विधियों से है जो मृदा को अपने स्थान से हटने से रोकते हैं। इसके लिए निम्न विधियाँ अपनाई जाती हैं –

1. **वनों का संरक्षण**– वृक्षों की जड़ें मृदा पदार्थों को बाँधे रखती हैं। वृक्षों की सड़ी गली पत्तियाँ मृदा को उपजाऊ बनाती हैं। इसलिए वनों का संरक्षण आवश्यक है।

2. **वृक्षारोपण**– नदी घाटियों, बंजर भूमियों तथा पर्वतीय ढालों पर वृक्ष लगाना मृदा संरक्षण का महत्वपूर्ण उपाय है। इसके द्वारा मरूस्थलों के विस्तार को रोका जा सकता है।

3. **भूमि उद्धार**– जल द्वारा बनी उबड़-खाबड़ भूमियों को समतल बनाकर मृदा अपरदन को रोका जा सकता है।

4. **नियोजित चराई**– अत्यधिक चराई के कारण मृदा की परत ढीली पड़ जाती है। उसके कणों को वायु उड़ा ले जाती है या जल बहा ले जाता है। अत: अनियंत्रित चराई पर रोक लगाना चाहिए।

5. **बाढ़ नियंत्रण**– बाढ़ों से जल प्रवाह के वेग के कारण मिट्टी के बह जाने से मृदा अपरदन में वृद्धि होती है। अत: नदियों पर छोटे-छोटे बाँध बनाए जाना चाहिए, ताकि प्रवाह का वेग कम होने से अपरदन कम हो।

6. सीढ़ीदार खेत बनाना- पर्वतीय ढालों पर मृदा संरक्षण के लिए सीढ़ीदार खेत बनाना अधिक उपयोगी होता है, क्योंकि ढाल से बहती मिट्टी समतल खेत में जमा हो जाती है।

7. फसलों में फेरबदल- मृदा की उर्वरता को बनाए रखने के लिए फसलों को बारी-बारी से बदल कर बोना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प चुनकर लिखिए-

1. किस प्रक्रिया द्वारा चट्टानों के टूटे पदार्थ अपने मूल स्थान पर संग्रहीत होते हैं?

   क. अपरदन   ग. परिवहन

   ख. अपक्षय   घ. निक्षेपण

2. निम्न में से किस क्षेत्र में पवन अपने कार्य सम्पन्न करती है?

   क. मरूस्थलीय क्षेत्र में   ख. पर्वतीय क्षेत्र में

   ग. समुद्र तटीय क्षेत्र में   घ. मैदानी क्षेत्र में

3. मृदा को उपजाऊ बनाने में कौन-सा तत्व महत्वपूर्ण है?

   क. मूल चट्टानी पदार्थ   ख. ह्यूमस

   ग. जलवायु   घ. मनुष्य

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

1. जब कोई चट्टान बिना किसी रासायनिक परिवर्तन के टुकड़ों में टूट जाती है उसे .... अपक्षय कहते हैं।
2. असमतल धरातल के समतल होने की क्रिया को .... कहते हैं।
3. हिमानी जो कंकड़-पत्थर, रेत आदि जमा करती है उसे .... कहते हैं।
4. नदी के निक्षेपण से .... झील का निर्माण होता है।
5. भारत में उड़ीसा के तट पर लेगून झील का उत्तम उदाहरण .... नामक झील है।

अति लघु उत्तरीय प्रश्न-

1. नदी के तीन कार्य कौन-कौन से हैं?
2. नदी की तीन अवस्थाएँ कौन-कौन सी हैं?
3. एश्चुअरी (ज्वारनद मुख) किसे कहते हैं?
4. गीजर किसे कहते हैं?

5. यारदांग कौन बनाता है?

6. लैगून किसे कहते हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. मृदा निर्माण के प्रमुख कारकों के नाम लिखिए।

2. अपक्षय किसे कहते हैं? अपक्षय के विभिन्न प्रकारों के नाम लिखिए।

3. निम्नीकरण और अधिवृद्धि में अन्तर बताइए।

4. वी (V) आकार की घाटी का निर्माण किस प्रकार होता है?

5. हिमोढ़ किसे कहते हैं? उनके प्रकारों के नाम लिखिए।

6. भूमिगत जलस्तर किसे कहते हैं।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. तल सन्तुलन की प्रक्रिया को समझाइए।

2. मृदा अपरदन किसे कहते हैं? मृदा अपरदन के कारण तथा संरक्षण के तीन उपाय लिखिए?

3. पवन अपरदन किस प्रकार होता है? पवन अपरदन से निर्मित स्थलाकृतियों का वर्णन कीजिए।

4. हिमानी किसे कहते हैं? हिमानी के प्रकार उदाहरण सहित लिखिए।

5. भूमिगत जल के कार्यों का सचित्र वर्णन कीजिए।

6. समुद्र की लहरें किस तरह अपरदन और निक्षेपण का कार्य करती हैं।

प्रायोजना कार्य–

- बड़ी ड्राईंग शीट पर तल सन्तुलन का नामांकित रेखाचित्र बनाइए।
- मृदा परिच्छेदिका का नामांकित चित्र बनाइए।
- मृदा अपरदन रोकने के लिए वर्षा ऋतु में कोई एक वृक्ष लगाकर उसकी देखभाल कीजिए।

विविध प्रश्नावली - 1

निम्नलिखित प्रश्नों के सही विकल्प चुनकर लिखिए–

1. 1608 ई. में प्रथम अंग्रेजी जहाजी बेड़ा किसके नेतृत्व में भारत पहुँचा था–
   क. डुप्ले　　ख. राबर्ट क्लाइव
   ग. कैप्टन हॉकिन्स　　घ. चार्ल्स द्वितीय
2. इंग्लैण्ड में कानून बनाकर भारतीय कपड़े के आयात पर कब रोक लगाई गई–
   क. 1700 ई. में　　ख. 1813 ई. में
   ग. 1793 ई. में　　घ. 1716 ई. में
3. अंग्रेजों के विरुद्ध 'सन्यासी विद्रोह' का उल्लेख किस पुस्तक में मिलता है–
   क. गीत गोविन्द　　ख. आनन्दमठ
   ग. कामायनी　　घ. आइने अकबरी
4. प्राचीन काल में वर्ण व्यवस्था किस पर आधारित थी–
   क. धर्म　　ख. कर्म
   ग. यज्ञ　　घ. जाति
5. 'लोकतंत्र जनता का, जनता के लिए और जनता द्वारा शासन है', यह कथन है –
   क. अब्राहम लिंकन　　ख. महात्मा गाँधी
   ग. पं. जवाहरलाल नेहरू　　घ. कार्ल मार्क्स
6. पृथ्वी की सबसे बाहरी व ऊपरी पर्त को क्या कहते हैं –
   क. भू-पर्पटी　　ख. शैल
   ग. जलमंडल　　घ. वायुमंडल
7. नर्मदा नदी अपने मुहाने पर बनाती है –
   क. ज्वारनदमुख　　ख. वी आकार की घाटी
   ग. जलप्रपात　　घ. गोखुर झील

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

1. अलीवर्दी खाँ ..... ई. में बंगाल का नवाब बना।
2. 1843 ई. में कानून बनाकर ..... प्रथा पर रोक लगाई गई।
3. ..... के नेतृत्व में खासी विद्रोह हुआ था।
4. ..... के माध्यम से शिक्षा देना अधिक सरल एवं उपयोगी होता है।

5. हमारे देश में संविधान के अनुसार ..... शासन पद्धति की स्थापना की गई है।
6. पृथ्वी के ऊपरी धरातल का लगभग 80 प्रतिशत भाग ..... चट्टानों से ढँका है।
7. जबलपुर के पास भेड़ाघाट का ..... दर्शनीय है।

अति लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. डलहौजी द्वारा अवध को किस आधार पर ब्रिटिश शासन का अंग बनाया गया?
2. एशियाटिक सोसाइटी की स्थापना कब व किसके द्वारा की गई?
3. बैरकपुर में नए कारतूसों का इस्तेमाल करने से किसने मना किया था?
4. हमारे राष्ट्रीय पर्व कौन-कौन से हैं?
5. लोकतंत्र का चौथा स्तंभ किसे कहा गया है?
6. भूकम्प की उत्पत्ति जिस स्थान पर होती है, उसे क्या कहते हैं?
7. लोएस किसे कहते हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न–

1. भारत में अंग्रेजों की सफलता का कोई एक कारण बताइए?
2. रैय्यतवाड़ी व्यवस्था क्या थी?
3. रामोसी विद्रोह का वर्णन कीजिए।
4. राष्ट्रीय एकीकरण में पर्यटन के महत्व को समझाइए।
5. नि:शस्त्रीकरण से क्या आशय है?
6. मैदानों को 'सभ्यता का पालना' क्यों कहा जाता है?
7. जैविक अपक्षय किसे कहते हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न–

1. बक्सर के युद्ध का वर्णन कीजिए।
2. ब्रिटिश शासन की न्याय एवं कानून व्यवस्था का वर्णन कीजिए।
3. 1857 से पूर्व किसानों और दस्तकारों की स्थिति का वर्णन कीजिए।
4. साम्प्रदायिकता देश की एकता के लिए खतरा है। समझाइए।
5. लोकतंत्र में मतदान के महत्व को समझाइए।
6. ज्वालामुखी के प्रकारों का वर्णन कीजिए।
7. नदी अपरदन से निर्मित स्थलाकृतियों का वर्णन कीजिए।